6

आरण्यक और उपनिषद्

मन्त्र और ब्राह्मण का वेद नाम है ऐसा जानना चाहिए श्रुति अनुसार मन्त्र, ब्राह्मण दो वेद के भाग है। वहाँ ब्राह्मण के भी तीन भाग है। और वे ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्। ब्राह्मण ग्रन्थों का विस्तृत परिचय पहले ही हुआ है। अब आरण्यकों का परिचय प्रस्तुत करते है। ऋग्वेद आदि भाग के अनुसार से आरण्यक भी बहुत है। उनमें कुछ विशिष्ट आरण्यक हैं जैसे ऐतरेय आरण्यक, बृहदारण्यक, शांख्यायन आरण्यक और तैत्तिरीय आरण्यक यहाँ प्रस्तुत है। आरण्यक प्रपाठकों में विभक्त है। और वे अनुवाको में विभक्त है। महाव्रत के अनुष्ठान वर्णन, निष्कैवल्य शास्त्र, प्राणविद्या, पुरुष आदि का वर्णन, कुछ स्थलो में ब्रह्मविद्या की गूढ़ता का विस्तार से भी वर्णन है। ये किस वेद में प्रपाठक में और अनुवाक में है, उसका भी यहाँ वर्णन है।

इस अध्याय के द्वितीय भाग में उपनिषदों का वर्णन है। उपनिषद् भारतीयों के अध्यात्म विद्या का ज्वलित रत्न है। महर्षियों ने जो आध्यात्मिक तत्त्व ध्यान के माध्यम से साक्षात् किया उन सभी तत्त्वो का यहाँ वर्णन है। उपनिषद् परा विद्या कहलाती है। वेदान्त ही उपनिषद् है। उपनिषद्, शब्द का अर्थ रहस्य है। अध्यात्म विद्या का रहस्य प्रतिपादक वेदभाग उपनिषद् ऐसा कहलाता है। महर्षियों ने आध्यात्मिक विद्या से उन गूढ से भी गूढ़ रहस्यो का भी विस्तृत विचार करते हुए प्राप्त होते है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- विविध आरण्यकों के विषय में जान पाने में;
- उपनिषदों का सामान्य रूप से परिचय प्राप्त कर पाने में;
- आरण्यकों के नामकरण की सार्थकता को समझ पाने में; और
- केन उपनिषद् और छान्दोग्य उपनिषद् का परिचय जान पाने में।

6.1 आरण्यक का सामान्य परिचय

आरण्यक और उपनिषद् ब्राह्मणों के परिशिष्ट ग्रन्थ के समान होते हैं। जैसे ब्राह्मण ग्रन्थों में सामान्य प्रतिपाद्य विषयों से भिन्न विषयों का प्रतिपादन है तथा इनका भी है। सायणाचार्य के मत में इस ग्रन्थ का अरण्य में पाठ होने से 'आरण्यक' यह नामकरण सार्थक ही है। जैसे –

'अरण्याध्ययनादेतद् आरण्यकमितीर्यते।
अरण्ये तदधीयीतेत्येवं वाक्यं प्रवक्ष्यते॥' **–(तै० आ० भा०, श्लो० ६)**

इन ग्रन्थों के मनन स्थान जंगल का एकान्त शान्त वातावरण है। गाँव के अंदर इसका अध्ययन कभी भी लाभदायक उचित उपयोग नहीं है। आरण्यक का मुख्य प्रतिपाद्य विषय केवल यज्ञ ही नहीं, अपितु यज्ञ, याग आदि के अन्दर विद्यमान आध्यात्मिक तथ्य की विवेचना भी है। यज्ञीय अनुष्ठान के साथ उसके अन्तर्गत दार्शनिक विचार भी इसका मुख्य विषय है। संहिता मन्त्रों में जिस विद्या का सङ्केत मात्र ही उपलब्ध होता है, यहां उसका विश्लेषण भी है।

आरण्यक का महत्त्व सभी जगह स्वीकार किया है। महाभारत का कथन है कि औषधियों से जैसे अमृत को धारण किया वैसे ही वेदों से सार को लेकर के आरण्यकों की रचना की। जैसे –

'आरण्यकञ्च वेदेभ्य ओषधिभ्योमृतं यथा। **(महाभा० १।२६५)**

मन्त्र ब्राह्मणात्मक का वेद के जिस अंश में प्राण विद्या का प्रतीक और उपासना के विषय में वर्णन है वह ही अंश आरण्यक है ऐसा कहते है। आरण्यक भी ब्राह्मण का ही अंश है। उसकी विशिष्टता प्रदर्शन के लिए 'रहस्यब्राह्मण' इस नाम से भी जाना जाता है। निरुक्त की टीका में (१।४) दुर्गाचार्य ने, 'ऐतरेयके रहस्यब्राह्मणम्' ऐसा कह करके ऐतरेय आरण्यक उदाहरण दिया है (२।२।१)। इससे रहस्यब्राह्मण, और आरण्यक के एकता की सिद्धि होती है, आरण्यक का अन्य नाम रहस्य भी है (गोपथ० ब्रा० १०)। क्योंकि जैसे आरण्यक यज्ञ के गूढ़ रहस्य का प्रतिपादन करता है वैसे ही कर्मकाण्ड की दार्शनिक व्याख्या भी प्रस्तुत करता है। मुख्य रूप से ब्रह्मविद्या रहस्य शब्द से जानी जाती है। विषय विवेचना की दृष्टि से आरण्यक के साथ उपनिषद् की भी समानता है। इसलिए बृहदारण्यक आदि ग्रन्थ को उपनिषद् इस शब्द से भी प्रयोग किया जाता है। किन्तु वर्णनीय विषय की समानता भी उन दोनों के मध्य में कुछ भेद दिखाई देता है। आरण्यक का मुख्य विषय प्राणविद्या तथा प्रतीक उपासना है। उपनिषदों में वर्णित विषय निर्गुण ब्रह्म प्राप्ति का उपाय है। यद्यपि यहाँ भेद है, फिर भी दोनों ग्रन्थ रहस्य ग्रन्थ है।

पाठगत प्रश्न 6.1

1. आरण्यक किन ग्रन्थों का परिशिष्ट भाग है?
2. सायणाचार्य के मत से आरण्यक नाम करण का सार्थक श्लोक को लिखिए?

3. आरण्यक के मनन के लिए उपयुक्त स्थान क्या है?
4. यज्ञ अनुष्ठान और दार्शनिक विचार किस ग्रन्थ का मुख्य बिषय है?
5. आरण्यक किसका सारभूत है?
6. आरण्यक वेदों से औषधि के समान सारभूत है यहाँ क्या प्रमाण है?
7. रहस्य ब्राह्मण क्या है?
8. आरण्यक किसके गूढ़ रहस्य को प्रदर्शित करते हैं?
9. रहस्य शब्द से किस विद्या का मुख्य रूप से प्रतिपादन करते है?
10. आरण्यक और उपनिषद् में क्या भेद है?

6.2 ऐतरेय आरण्यक

ऋग्वेद के दो आरण्यकों के मध्य में यह श्रेष्ठ आरण्यक है। यह आरण्यक ऐतरेय ब्राह्मण का ही परिशिष्ट भाग है। इसमें पांच आरण्यक है। ये आरण्यक भिन्न ग्रन्थ रूप से माने जाते हैं।

प्रथम आरण्यक में महाव्रत का वर्णन है। यह महाव्रत ऐतरेय ब्राह्मण के तीसरे प्रपाठक के गवामयन का ही एक अंश है। दूसरे प्रपाठक के पहले तीन अध्यायों में उक्थ, निष्कैवल्य शस्त्र, प्राणविद्या, पुरुष आदि की विवेचना है। चौथे पांचवे छठे अध्यायों में ऐतरेय उपनिषद् है। तीसरे आरण्यक का अन्य नाम है संहितोपनिषद्। इस उपनिषद् में संहिता, पदक्रम, पाठों का वर्णन तथा स्वर व्यञ्जन आदि स्वरूप का भी विवेचन है। इस खण्ड में शाकल्य का और माण्डुकेय के मतों का उल्लेख है। यह अंश बिना संदेह के रूप से प्रातिशाख्य निरुक्त आदि से भी प्राचीन है। व्याकरण विषय का भी यह ही अंश बहुत ही प्राचीन है। इससे इस आरण्यक के समय की पूर्व सीमा विक्रम से एक हजार वर्ष पहले मानते हैं। उससे यह आरण्यक यास्क से पूर्ववर्ति माना जाता है। क्योंकि इस अंश में निर्भुज, प्रतिघ्ण, सन्धि, संहिता आदि के पारिभाषिक शब्द प्रयुक्त है। चौथा आरण्यक बहुत ही छोटा है। इस आरण्यक में महाव्रत के पांचवे दिन में प्रयुक्त होने वाली महानाम्न ऋचा है। अन्तिम आरण्यक में निष्कैवल्य शस्त्र का वर्णन है। इन आरण्यकों में पहले तीन के रचयिता ऐतरेय, चौथे के आश्वलायन और पांचवें का शौनक माना जाता है। यह शौनक बृहद्देवता का निर्माता है। डॉ० कीथ महोदय ने इस आरण्यकों निरुक्त से बाद में लिखा हुआ मानकर इसका समय विक्रम से छः सौ वर्ष पहले मानते है। किन्तु वास्तव में यह आरण्यक निरुक्त से अधिक प्राचीन है। यह आरण्यक महीदास, ऐतरेय के पहले तीन आरण्यकों के कर्ता होने से ऐतरेय ब्राह्मण के ही समकालिक है ऐसा सिद्ध होता है।

पाठगत प्रश्न 6.2

1. ऐतरेय आरण्यक किस वेद के अन्तर्गत आता है?
2. ऐतरेय आरण्यक किसका परिशिष्ट ग्रन्थ है?

3. ऐतरेय के प्रथम आरण्यक में किसका वर्णन है?
4. दूसरे प्रपाठक के आदि तीन अध्यायों में किसका वर्णन है?
5. अन्तिम आरण्यक में किसका वर्णन है?
6. तृतीय आरण्यक का दूसरा नाम क्या है?
7. संहितोपनिषद् में किसका वर्णन है?
8. दूसरे चौथे आरण्यक के रचयिता कौन-कौन हैं?
9. बृहद्देवता का निर्माता कौन है?
10. अर्वाचीन इसका क्या अर्थ है?

6.3 शाङ्ख्यायन आरण्यक

यह ऋग्वेद का दूसरा आरण्यक है। इसमें पन्द्रह आध्याय है। तीसरे अध्याय से छठे अध्याय तक कौषीतकि, उपनिषद् कहलाता है, तथा सातवां, आठवा अध्याय संहितोपनिषद् कहलाता है। इनसे भिन्न अध्यायों में आरण्यक के मुख्य विषयों का प्रतिपादन है। पहले दूसरे अध्याय में महाव्रत का वर्णन उपलब्ध है। यहाँ एक यज्ञ है, गवामयन-नामक यज्ञ ऐसा उसका नाम है। उस यज्ञ का जो अन्तिम दिन उससे पहले के दिन में महाव्रत का अनुष्ठान होता है। इसी ही दिन में तीन सवन भी होते हैं। इस आरण्यक में होतृ नाम का जो ऋत्विज है उससे प्रयुक्त शास्त्रों का वर्णन है। महाव्रत के सभी अनुष्ठानों के विधान शाङ्खायन श्रौतसूत्र में है। इस अनुष्ठान का सबसे महत्त्वपूर्ण अङ्ग महदुक्थम् अथवा निष्कैवल्यशास्त्र है। इसका विस्तार सहित वर्णन वहीं अन्य अध्यायों में भी (१।४।५,२=१-१७) उपलब्ध होता है।

कौषीतकि ब्राह्मण उपनिषद् चार अध्यायों में विभक्त है। यह उपनिषद् शाङ्खायन आरण्यक का ही अंश है। यह कौषीतकि ब्राह्मण उपनिषद् और संहितोपनिषद् अध्याय के अगले भाग में है। ये दो उपनिषद् शाङ्खायनारण्यक के अविभाज्य अङ्ग है। इसका वर्णन उपनिषद् के वर्णन प्रसङ्ग में आगे होगा। नौवें अध्याय में प्राण की श्रेष्ठता का वर्णन है। दसवें अध्याय के अन्तर अग्निहोत्र का अङ्ग सहित और उपाङ्ग इत्यादि का वर्णन है। इस अध्याय का कथन है कि अग्निहोत्र से जिस देव के संतुष्टि का विधान है, अथवा देव को तृप्त करते है, वह देव जीव के अंदर ही विद्यमान है। बाह्य अग्निहोत्र से इसकी तृप्ति होती है। जो साधक इस तत्त्व से अज्ञात होकर केवल बाहर के हवन में ही आसक्त होता है, वह केवल राख में ही हवन करता है। मृत्यु को भगाने के लिए एक विशिष्ट याग का ग्यारहवें अध्याय में विस्तृत विवरण दिया है। बारहवें अध्याय में बिल्व फल से मणि निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन है, काल का और स्वरूप का वर्णन है। जिसको धारण करके साधक शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है। तेरहवें और चौदहवें अध्यायों में अत्यंत संक्षेप से आत्मा का ब्रह्म के साथ एकत्व प्राप्ति जीव की सबसे बड़ी उपलब्धि के विषय में कहते है। 'आत्मावगम्योऽहं ब्रह्मास्मीति' यह ही उक्ति इस आरण्यक का सबसे श्रेष्ठ उपदेश है -

टिप्पणियाँ

'ऋचां मूर्धानं यजुषामुत्तमाङ्गं
साम्नां शिरोऽथर्वणां मुण्डमुण्डम्।
नाधीतेऽधीत वेदमाहुस्तमज्ञं
शिरस् द्वित्वासौ कुरुते कबन्धम्॥'

पंद्रहवे अध्याय में आचार्य का वंश वर्णन है। इस अध्याय से स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है की इस आरण्यक के दृष्टा ऋषि का नाम गुणाख्य शाङ्ख्यायन था। उसके गुरु का नाम कहौल कौषीतकि था। ये दोनों अन्तिम आचार्य है। इसी ही कारण से इस शाङ्ख्यायन आरण्यक के अन्तर्गत उपनिषद् कौषीतकि नाम से विख्यात है।

पाठगत प्रश्न 6.3

1. ऋग्वेद का दूसरा आरण्यक किस नाम से कहते है?
2. कौषीतकि उपनिषद् किस आरण्यक के किस अध्याय को अतिव्याप्त करके आख्या की है?
3. शांख्यायन आरण्यक के सातवें, आठवें अध्याय में व्याप्त कौन सा उपनिषद् है?
4. महाव्रत अनुष्ठान कब होता है?
5. महाव्रत अनुष्ठान में विहित विधानों का वर्णन कहाँ है?
6. मृत्यु को भगाने के लिए विशिष्ट याग का वर्णन कहाँ पर है?
7. बारहवें अध्याय में किसका वर्णन है?
8. जीव ब्रह्म की एकता शांख्यायन आरण्यक के किस अध्याय में वर्णित है?
9. पंद्रहवे अध्याय में क्या वर्णित है?
10. शांख्यायन आरण्यक का द्रष्टा कौन है?
11. शाङ्यायन आरण्यक दृष्टा के गुरु का क्या नाम है?

6.4 बृहदारण्यक

यह आरण्यक यजुर्वेद के साथ सम्बद्ध है। किन्तु आत्मतत्त्व की विशेष विवेचना को यह उपनिषद् भी कहता है। यह आरण्यक भी प्राचीनतम और मान्य है। कृष्ण यजुर्वेद की मैत्रायणी शाखा का भी एक आरण्यक है, जो मैत्रायणीय उपनिषद्, इस नाम से विख्यात है।

पाठगत प्रश्न 6.4

1. बृहदारण्यक किस वेद से सम्बद्धित है?
2. बृहदारण्यक का उपनिषद् कथन का क्या कारण है?
3. कृष्ण यजुर्वेद में मैत्रायणी शाखा के अन्तर्गत उपनिषद् का क्या नाम है?

6.5 तैत्तिरीय आरण्यक

इस आरण्यक में दस परिच्छेद अथवा प्रपाठक हैं। यह प्रपाठक सामान्य रूप से 'अरण' इस पद से जानी जाती है। इसका नामकरण भी उससे ही होता है। जैसे पहले प्रपाठक का नाम है – 'भद्र', दूसरे का – 'सहैव', तीसरे का – 'चिति', चौथे का – 'युञ्जते', पांचवे का – 'देव वै', छठे का – 'परे', सातवे का – 'शिक्षा', आठवे का – 'ब्रह्मविद्या', नौवे का – 'भृगु', दसवें का – 'नारायणीय' है। इसमें सात, आठ और नौवें प्रपाठकों को मिलाकर 'तैत्तिरीय उपनिषद्' कहलाता है। दसवें प्रपाठक को भी महानारायणीय उपनिषद् कहलाता है। यह प्रपाठक आरण्यक का परिशिष्ट भाग है। प्रपाठकों का विभाजन अनुवाकों में है। नौवें प्रपाठक तक अनुवाकों की संख्या १०७ है। तैत्तिरीय ब्राह्मण के समान ही यहाँ पर भी प्रत्येक अनुवाक में दस वाक्यों का एक अङ्क होता है। प्रत्येक दस का अन्तिम पद अनुवाक के अन्तिम में परिगणन किया है। इस आरण्यक में ऋक् मन्त्र उद्धृत है।

पहला प्रपाठक आरुण-केतु नाम की अग्नि की उपासना का तथा उसके लिए ईटों के चयन का वर्णन करता है। दूसरे प्रपाठक में स्वाध्याय का तथा पञ्चमहायज्ञों का वर्णन है। यहाँ गङ्गा-यमुना के बीच का स्थान पवित्र, तथा मुनियों के निवास के लिए उत्कृष्ट भूमि का वर्णन है। तीसरे प्रपाठक में चार होताओं के चित्त में उपयोगी मन्त्रों का सङ्ग्रह है। चौथे अध्याय में संन्यासी के उपयोगी मन्त्रों का सङ्ग्रह है। यहाँ कुरुक्षेत्र का और खाण्डव का वर्णन भौगोलिक स्थित्ति के अनुसार से ही है। इस प्रपाठक में अभिचार मन्त्रों की भी सत्ता है। आभिचारिक मन्त्रों का प्रयोग शत्रुओं के नाश के लिए होता है। ४।२७ मन्त्र में तथा ४।३७ मन्त्र में 'छिन्धी भिन्धी हन्धी कट' इस प्रकार के मन्त्रों का स्पष्ट रूप से यहाँ संकेत है। ४।३८ मन्त्र में अथर्ववेद के आभिचारिक मन्त्र के प्रति स्फुट रूप से सङ्केत प्राप्त होता है। पाँचवे प्रपाठक में यज्ञों के सङ्केत नाम उपलब्ध होते हैं। छठे प्रपाठक में पितृमेध सम्बन्धी मन्त्रों का उल्लेख है। सातवें, आठवें और नौवें प्रपाठकों में तैत्तिरीय उपनिषद् है। दसवें प्रपाठक में नारायणीय उपनिषद् है। इस प्रपाठक की संख्या का भी निर्देश नहीं है।

इस आरण्यक में स्थान-स्थान पर कुछ विशेष बात भी प्राप्त होती है। जैसे- १. कश्यप का अर्थ होता है सूर्य। इसकी व्युत्पत्ति पर्याप्त रूप से वैज्ञानिक है। 'कश्यप देखने वाला होता है। जो सभी को चारो और से सूक्ष्मता से देखता है' १।८।८) अर्थात् पश्यक शब्द से वर्ण को बदलने के नियम से कश्यप शब्द बनता है। इसी प्रकार से वर्ण व्यत्यय से बने हुए शब्द का सुंदर उदाहरण यह

टिप्पणियाँ

है। (२) पाराशर व्यास का भी यहाँ उल्लेख प्राप्त होता है (१।९।२)। (३) दूसरे प्रपाठक के आरम्भ में ही संध्या में प्रयुक्त सूर्य के अर्घजल की महिमा का वर्णन है। उस जल प्रभाव से मन्देह नाम के दैत्य का सभी प्रकार से विनाश होता है (२।२)।

सामवेद से सम्बद्ध भी एक आरण्यक है। यह आरण्यक तवलकार आरण्यक के नाम से प्रसिद्ध है। यह ही आरण्यक 'जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण' कहलाता है। इसमें चार अध्याय है। प्रत्येक अध्याय में अनुवाक हैं। चौथे अध्याय का दसवें अनुवाक में प्रसिद्ध तवलकार, अथवा केनोपनिषद् है। अथर्ववेद का कोई भी आरण्यक उपलब्ध नहीं है। इस वेद से सम्बद्ध जो उपनिषद् है, वे किसी भी आरण्यक के अंश नहीं होकर प्रारम्भ से ही स्वतन्त्र ग्रन्थ रूप से विद्यमान है।

पुराणों में आरण्यक का आचार्य रूप में शौनक के नाम का उल्लेख है – 'शौनको नाम मेधावी विज्ञानारण्यके गुरुः' (पद्मपुरा० ५।१।१८) पुराण का यह वाक्य यथार्थ है। क्योंकि आचार्य शौनक एक ब्रह्मवेत्ता ऋषि थे। इन्होने वेदों की अध्यात्म परक व्याख्या की है। जो की इस वामीयभाष्य में आत्मानन्द ने लिखा है– 'अध्यात्मविषयां शौनकादिरीतिम्'। पद्म पुराण का विज्ञान आरण्यक शब्द भी आरण्यक स्वरूप का परिचायक है। आरण्यक विज्ञान के विशिष्ट ज्ञान का अथवा अध्यात्म ज्ञान का बोधक ग्रन्थ है यह भी इससे ही जाना जाता है।

पाठगत प्रश्न 6.5

1. प्रपाठक सामान्य रूप से किस नाम से जाने जाते है?
2. तीसरे, सातवें, आठवें प्रपाठकों का नाम लिखिए।
3. अन्तिम प्रपाठक का क्या नाम है?
4. तैत्तिरीय आरण्यक के कौन-कौन से अध्याय तैत्तिरिय उपनिषद् कहलाते हैं?
5. तैत्तिरीय आरण्यक के किस प्रपाठक में गङ्गा यमुना की कथा का वर्णन है?
6. पांचवे प्रपाठक में किसका वर्णन है?
7. परे यह किस प्रपाठक का नाम है?
8. काश्यप का क्या अर्थ है?
9. दूसरे प्रपाठक के आरम्भ में क्या-क्या वर्णित है?
10. प्रपाठकों का विभाजन कैसे होता है?
11. सामवेद संबन्धित आरण्यक का क्या नाम है?
12. तवलकार आरण्यक किस नाम से कहलाता है?
13. केन उपनिषद् किस अनुवाक में है?
14. आरण्य आचार्य कौन है?
15. वेदों की अध्यात्म परक व्याख्या किसने की है?

6.6 उपनिषदों का सामान्य परिचय

भारतीय दर्शन साहित्य में श्रुति, स्मृति, न्याय, आख्यानों के तीन प्रस्थान है। वे वेदों को ही धारण करके स्थित है। उनमें मानव जीवन के चरम लक्ष्य और उसकी प्राप्ति साधन का उपदेश है। उपनिषद् प्रस्थान त्रयी में प्रथम प्रस्थान कहलाता है, क्योंकि यह ही भारतीय विचार शास्त्र का श्रेष्ठ उपजीव्य ग्रन्थ है। श्रीमद्भगवद्गीता को दूसरा प्रस्थान कहते है। गीता कैसे दूसरा प्रस्थान है यह निम्नलिखित श्लोक से स्पष्ट होता है –

'सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्॥'

बादरायण व्यास प्रणीत ब्रह्मसूत्र को तीसरा प्रस्थान कहते है। वहाँ अचानक विरोधियों का उपनिषद् वाक्यों के मध्य में सामजस्य अच्छी प्रकार से प्रदर्शित करते है। उससे भी सभी वाक्यों का ब्रह्मनिष्ठ सिद्ध होता है। और भी तार्किको की युक्ति भी यहाँ निराकृत की है। भारतीय वैदिक धर्म ग्रन्थ और दर्शन यह ही प्रस्थानत्रय का अवलम्बन करते है।

उप–नि–पूर्वक विशरण गति अवसादन अर्थ से 'षद्लृ'–धातु से क्विप प्रत्यय में रूप उपनिषद् बनता है। उपनिषदों के अध्ययन से ऐहिक विषयों में तथा आमुष्मिक विषयों में वैराग्य को स्वीकार करके संन्यासियों की संसार की बीजभूत विद्या नष्ट हो जाती है। तब मुमुक्षु पुरुष ब्रह्म को प्राप्त करता है, और दुःखों से दूर होता है। ब्रह्म स्वरूप का उसकी प्राप्ति उपाय का, जीव का, जगत का, तथा आत्मा आदि विषयों का विस्तार सहित वर्णन उपनिषद् में है। इसलिए इसका 'उपनिषद्' यह नाम (संज्ञा) युक्त ही है।

'सर्वोपनिषदां मध्ये सारमष्टोत्तरं शतम्' यह मुक्तिकोपनिषद् का वाक्य है। इससे जाना जाता है कि उपनिषद् एक सौ आठ से भी अधिक थे। किन्तु एक सौ आठ संख्या तक ही उपनिषद् प्राप्त होते है। इन उपनिषदों में प्राय बारह उपनिषद् प्राचीन और विस्तृत विषय का प्रतिपादन करते है। इसलिए ये प्रमाणिक होते है। वहाँ १० उपनिषद् ऋग्वेद से सम्बद्ध, १९ उपनिषद् शुक्ल यजुर्वेद से सम्बद्ध, ३२ कृष्ण यजुर्वेद से सम्बद्ध, १६ सामवेद से सम्बद्ध, ३१ अथर्ववेद से सम्बद्ध। वेदान्त आचार्यो ने इन उपनिषदों की व्याख्या लिखी। उनमे भी दस उपनिषद् प्रसिद्ध है।

ऋग्वेदीय उपनिषदों में एतरेय, कौषीतकि, साम परक उपनिषदों में छान्दोग्य, केन उपनिषद्, कृष्ण यजुर्वेद विषयी उपनिषदों में तैत्तिरीय, महानारायण, कठ, श्वेताश्वतर, मैत्रायणी उपनिषद्, शुक्ल यजुर्वेद पर लिखे हुए ईशावास्य उपनिषद् बृहदारण्यक और अथर्ववेद में मुण्डक, माण्डूक्य, प्रश्न उपनिषद् गहरे चर्चित प्राचीन सभी जगह प्राप्त है। मुण्डक उपनिषद् में उपनिषदों की संख्या निम्न रूप से वर्णित है –

'ईश–केन–कठ–प्रश्न–मुण्ड–माण्डूक्य–तित्तिरिः।
ऐतरेयं च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं दश॥'

टिप्पणियाँ

ये दस उपनिषद् प्रसिद्ध है – ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक, उपनिषद्। किन्तु श्वेताश्वतर उपनिषद् भी प्रसिद्ध है।

कुछ उपनिषद् गद्यात्मक है, कुछ पद्यात्मक है, और कुछ गद्य पद्य दोनों से मिश्रित है। इन उपनिषदों का काल भिन्न भिन्न है, पुराने काल में प्रसिद्ध कुछ उपनिषद् बुद्ध काल से प्राचीन है ऐसा संस्कृत साहित्य के इतिहासकार कहते हैं।

सत्रहवीं शताब्दी में दाराशिकोह नाम शाहजहाँ–नाम के सम्राट पुत्र ५० संख्या तक उपनिषद् पारसी भाषा में ब्राह्मण पण्डितों की सहायता से अनुवाद किये। शोपेन हावेर (Shopen Howers)–नाम से प्रसिद्ध विदेशी दार्शनिक उपनिषदों को अपने गुरुओं में गिनते थे। आजकल भी पाश्चात्यों में उपनिषदों का महान् प्रभाव विद्यमान है, प्रायः सभी ही सभ्य भाषाओ में इन उपनिषदों का अनुवाद किया है।

उपनिषद् अति सरल शैली में तत्त्व को बताते है, उससे उनका महत्त्व और लोकप्रिय प्रतिदिन बढ़ती है। जैसे कठ उपनिषद् में –

'आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च॥
इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्
आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः॥'

भगवद्गीता भी उपनिषद् का ही बोध कराता है।

पहले ही हमने यह कहा है की ये उपनिषद् एक काल में नहीं लिखे गए अपितु काल काल पर उनकी रचना हुई। प्रधान उपनिषद् बुद्ध से पूर्व ही रचे गए। इन उपनिषदों का काल क्या है, अथवा इनके मध्य में पारस्परिक सम्बन्ध क्या हैं इन विषयों को जानने के लिए प्राचीन विद्वानों ने अत्यधिक उपयोग किया है। जर्मन विद्वान् डायसन महोदय ने तो उपनिषदों को चार स्तरों में विभक्त किया है।

(क) प्राचीन गद्य उपनिषद्– जो गद्य ब्राह्मण गद्य के समान ही प्राचीन, लघुकाय और सरल है। जैसे – (१) बृहदारण्यक उपनिषद्, (२) छान्दोग्य उपनिषद्, (३) तैत्तिरीय उपनिषद्, (४) ऐतरेय उपनिषद्, (५) कौषीतकि उपनिषद् (६) और केन उपनिषद्।

(ख) प्राचीन पद्य उपनिषद्– जो पद्य प्राचीन, सरल तथा वैदिक पद्य के समान ही है। जैसे – (७) कठ उपनिषद्, (८) ईश उपनिषद्, (९) श्वेताश्वतर उपनिषद् (१०) और महानारायण उपनिषद्।

(ग) उत्तरकालिक गद्य उपनिषद्– (११) प्रश्न उपनिषद्, (१२) मैत्रायणी उपनिषद् (१३) माण्डूक्य उपनिषद्।

(घ) आथर्वण उपनिषद्– जिनका उपयोग तान्त्रिक उपासना में विशिष्ट रूप से स्वीकार किया है – (१) सामान्य उपनिषद्, (२) योग उपनिषद्, (३) सांख्यवेदान्त उपनिषद्, (४) शैव उपनिषद्, (५) वैष्णव उपनिषद्, (६) और शाक्त उपनिषद्।

इस क्रम साधन में बहुत दोषो को दिखाकर डॉ० बेलवेलकर, राणाडे महोदय ने एक नई योजना प्रस्तुत की। Belvelkar and Ranade& History of Indian Philosophy- Vol. 2 p.p. इस ग्रन्थ में ८७-९० पृष्ठ तक उपनिषदों का रचनाकाल प्रदर्शित है, किन्तु वह इतना काल्पनिक और अप्रामाणिक है की विश्वास योग्य नहीं है। ईशावास्य उपनिषद् की दूसरे स्तर में स्थापना कभी भी न्याय सङ्गत नहीं है। क्योंकि इसके यज्ञ का महत्त्व ब्राह्मण काल में ही स्वीकार किया है ('कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषे शतं समाः') तथा बृहदारण्यक में कर्म संन्यास भावना की घोषणा ही नहीं है इस प्रकार ('पुत्रैषणायाश्च लोकैषणायाश्च ह्युत्थाय भिक्षाचर्यं चरन्ति'- बृहदारण्य०)। अन्य उपनिषदों के समान ही ईश उपनिषद् आरण्यक का अंश न होकर माध्यन्दिन संहिता का भाग है। मुक्तिकोपनिषद् मान्य परम्परा के अनुसार से यह समस्त उपनिषदों की गणना में प्रथम स्तरीय ही है। इस कारण बेलवेलकर-महोदय का कथन किसी भी तत्त्व जिज्ञासु मनुष्य के हृदय में विश्वास को उत्पन्न नहीं कर सकता है।

श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य भी अपने ग्रन्थ में उपनिषदों की प्राचीनता को प्रमाणित करने के लिए दो साधन सामने उपस्थित करते है। विष्णु का और शिव का परम देव स्वरूप में वर्णन, प्रकृति-पुरुष का तथा सत्त्व-रजस तमस तीन प्रकार के गुणों का और साङ्ख्य सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। यह सिद्धान्त सही प्रतीत होता है। तिलक महोदय के अनुसार उपनिषद् काल १९०० सौ वि० पूर्व होना चाहिए। इस प्रकार से उपनिषद् काल का शुभारम्भ २५०० सौ वि० पूर्व कह सकते है।

वस्तुत आरण्यक का परिशिष्टभूत उपनिषद् है। आरण्यक में आरम्भ हुए अध्यात्म तत्त्व की आलोचना उपनिषदों में ही पूर्ण पराकाष्ठा को प्राप्त करके ही समाप्त होता है। वेद का अन्तिम लक्ष्य होने से और वेद का प्रधान भाग होने से ही उपनिषद् वेदान्त कहलाते हैं। उपनिषद् शब्द का अर्थ ब्रह्मविद्या है। ब्रह्मविद्या संसार के प्राणी को बनाता, विस्तृत करता और शिथिल करता है। ब्रह्मविद्या ही उपनिषद् है फिर भी जैसे आयु बढ़ाने के लिए घी को 'आयुर्वै घृतम्' इस आयु शब्द का औपचारिक प्रयोग होता है, वैसे ही ब्रह्मविद्या के प्रकाशक ग्रन्थ में भी उपनिषद् शब्द का औपचारिक प्रयोग होता है। ब्रह्म ही एक सत् है अन्य सभी रस्सी में सांप की तरह ब्रह्म की अविद्या से आच्छादित असत् ही है। जीव हि अविद्या के प्रभाव से असद् वस्तु को सत् रूप से देखता है। स्वरूप से निष्काम ब्रह्मभूत भी अपने स्वरूप को भूलकर जो भिन्न नहीं है उसको भी भिन्न मानकर कामना, द्वेष अथवा कर्मो को करता है। और उससे ही वे कर्मो के शुभ अशुभ फल को भोगते है। जब तक माया का नाश नहीं हो जाता है, तब तक यह बिना रुका हुआ संसार चक्र चलता रहता है। अतः निष्काम कर्म द्वारा जब चित्त की शुद्धि होती है, तब यहाँ फलभोग से विरागवान होकर शम, दम आदि छः सम्पत्ति को प्राप्त करके संसार ताप अग्नि को सहन नहीं करने वाला मुमुक्षु यदि ब्रह्मज्ञ गुरु के समीप जाकर उनके मुख से वेदान्त वाक्यों को सुनकर मनन और निदिध्यासन का आचरण करता है तब समाधि में ब्रह्म में लीन हो तब उसकी माया नष्ट होती है। सभी आत्माओं में अपनी आत्मा को और अपने स्वरूप को देखता है। उसकी कोई भी द्वेष कामना नहीं रहती है। उसके लिए कोई चेष्टा भी नहीं होती है। कर्म अभाव से फल भी नहीं बढ़ते है। फल अभाव से फल उपभोग के लिए शरीर धारण करना भी आवश्यक नहीं है। वह ब्रह्मवेत्ता होने से दुबारा उत्पन्न नहीं होता है। जब तक प्रारब्ध का नाश नहीं हो जाता है, तब तक वह शरीर धारण के लिए

टिप्पणियाँ

आवश्यक कर्म मात्र का पालन करते हुए कर्तव्य मात्र का बोध करता है बुद्धि से। जैसे पुरुष मोम की मूर्ति को देखता हुआ उसके मोम मूर्ति के मात्र स्वरूप को ही देखता है, वैसे ही ब्रह्मवेत्ता भी जगत् को देखता हुआ भी ब्रह्म स्वरूप को ही देखता है। और प्रारब्ध के क्षीण होने पर सांप के समान शरीर को छोडकर ब्रह्म में लीन हो जाते हैं। ' ब्रह्मैव सद् ब्रह्म अप्येति ' इति वेदान्तसार।

(क) **ऋग्वेदस्य मुख्य उपनिषद्ाः** – ऐतरेयोपनिषत्, कौषीतकि उपनिषत्, निर्वाणोपनिषत् चेति।

(ख) **सामवेदस्य मुख्य उपनिषद्ाः** – छान्दोग्योपनिषत्, केनोपनिषत्, सन्न्यासोपनिषत् चेति।

(ग) **कृष्णयजुर्वेदस्य मुख्य उपनिषद्ाः** – तैत्तिरीयोपनिषत्, कठोपनिषत्, श्वेताश्वेतरोपनिषत् चेति।

(घ) **शुक्लयजुर्वेदस्य मुख्य उपनिषद्ाः** – बृहदारण्यकोपनिषत्, ईशोपनिषत्, भिक्षुकोपनिषत् चेति।

(ङ) **अथर्ववेदस्य मुख्य उपनिषद्ाः** – प्रश्नोपनिषत्, मुण्डकोपनिषत्, माण्डूक्योपनिषत्, नृसिंहतापनीयोपनिषत् चेति।

इनको भी छोड़कर अन्य भी कुछ उपनिषद् हैं। श्रीमद् भगवान शङ्करचार्य ने जिन ग्यारह उपनिषदों का भाष्य लिखा है वे है – 'ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्ड, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक, श्वेताश्वतर उपनिषद्'।

अब केन उपनिषद् तथा छान्दोग्य उपनिषद् को संक्षेप से जानेंगे।

6.7 केन उपनिषद्

उपनिषद् ब्रह्म के भाव को प्राप्त करने से इसे उपनिषद् कहते हैं। उपनिषद् शब्द ही प्रधान रूप से वेदान्त को कहते हैं। उसको कहते है वेदान्त नाम उपनिषद् प्रमाण है। ईश आदि दस उपनिषदों के मध्य में केन उपनिषद् का दूसरा स्थान मानते हैं वेदान्त विद्वान। यह उपनिषद् सामवेद की तवलकार शाखा के अन्तर्गत आता है। शङ्कर भगवान के लिए यद्यपि उपनिषद् शब्द से ब्रह्मविद्या को ही कहते है, फिर भी ग्रन्थ में उपनिषद् शब्द व्यवहार के लिए होता है। ब्रह्म विद्या में उपनिषद् शब्द मुख्य रूप से वृत्ति में है, ग्रन्थ बोध में तो लक्षण से।

यह उपनिषद् ''केनेषितं पतति प्रेषितं मनः'' इत्यादि मन्त्र से आरम्भ होता है। वहाँ मन्त्र के आदि में केने इस पाठ से केन उपनिषद् नाम को प्राप्त करता है। इसी प्रकार ईशावास्यमिदं सर्वम् इति मन्त्रा अंश से आरम्भ होने के कारण ईशावास्य उपनिषद् इस नाम से भी सुना जाता है। सभी उपनिषदों में अखण्ड ब्रह्म के स्वरूप की विशेष आत्म तत्त्व उपनिषदों में मुख्य रूप से प्रतिपाद्य विषय है। इसी प्रकार इस उपनिषद् में भी उसी तत्त्व का प्रतिपादन किया है। शङ्कर भगवान इसमें अत्यधिक रुचि लेते हैं। इसकी व्याख्या की कामना के लिए भगवान् भाष्यकार ने दो भाष्य लिखे। इस उपनिषद् का आरम्भ प्रश्न प्रतिवचनों से देखा जाता है। रथ आदि चेतना के समान मुख्य प्रवृत्ति चाहते हैं, बिना अधिकार के नहीं चाहते हैं। मन-आदि जड़ की लोक में प्रवृत्ति देखी जाती है। चेतना के समान अधिष्ठान के लिए अस्तित्व में उसी को ही लिङ्ग कहते हैं। इसलिए

कारणों का अधिष्ठान जो चेतनवान उसका क्या विशेषण है इस प्रकार का जिज्ञासु का प्रश्न है। उस समाधान के लिए उत्तरगर्भ का यह मन्त्र बताता है –

श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो मनो यद् वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणः।
चक्षुषश्चक्षुः अतिमुच्य धीरा प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति॥ इति।

क्रिया आदि विशेष रहित का आत्मा मन आदि प्रवृत्ति का निमित्त है उत्तरार्थ के लिए। इसलिए ही श्रीमान आनन्दगिरि द्वारा बनाई टीका के 'मन आदि का जो प्रवर्तक है क्या वह विशेष है इस प्रश्न की विशेषता ही विशेष उत्तर' है ऐसा कहा गया है। इसी प्रकार की उपाधि से मुक्त ही उस ब्रह्म तत्त्व को रूप रहित होने से आखों से देख नहीं सकता है। बिना शब्द के होने से वाणी से कह नहीं सकते है। इन्द्रियों के परे होने से मन से नहीं मान सकते है। यहाँ ही 'यद्वाचाऽनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते तदेव ब्रह्म तं भेदं यदिदमुपासते' इत्यादि मन्त्र देखना चाहिए। इस आत्म तत्त्व का सभी को अवश्य साक्षात् करना चाहिए। अन्यथा महाविनाश होना ही निश्चित है। जान लेने पर तो उस तत्त्व को, मृत्यु को जीतकर अमृतत्व को प्राप्त करता है साधक। इसलिए ही बार –बार वेदों की बात को जानना चाहिए –'तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय' इति।

6.8 छान्दोग्य उपनिषद्

यहाँ एक उपनिषद् को संक्षेप से कहते है। और वह छान्दोग्य उपनिषद् है। सामवेद के ही उपनिषदों में दूसरा ही छान्दोग्य उपनिषद् है। यह उपनिषद् सामवेद के छान्दोग्य ब्राह्मण का अंश विशेष है। यह आठ अध्यायों में लिखा हुआ उपनिषद् है। प्रत्येक अध्याय में दोबारा कुछ खण्ड हैं। सम्पूर्ण रूप से यहाँ एक सौ चौवन खण्ड तथा छः सौ अट्ठाईस मन्त्र है। प्रथम अध्याय के प्रारम्भ में ओङ्कार उपासना प्राप्त होती है। यह उपासना उद्गीतसङ्गीत का अङ्गभूत है। और कहा है –

'ओमित्येतदक्षरमुद्गीतमुपासीत' इति।

वहाँ कुछ उपाख्यान (कथा) है। उनमें श्रेष्ठ सत्यकाम जावालि का उपाख्यान है, और उपकोसल का उपाख्यान है। कर्मोपासना ब्रह्मविद्या की यहाँ अच्छी प्रकार से आलोचना की है। कर्मवत उपासना भी सकाम और निष्काम भेद से दो प्रकार की है। जो मनुष्य शास्त्र के नियम का पालन नहीं करते है, वे अधोगति को प्राप्त करते है और कहा है –

अथैतयोः पथोर्न कतरेणचन तानीमानि।
क्षुद्रान्यसकृदावर्तीनि भूतानि भवन्ति॥ इति।

जो लोग उपासना से इच्छा पूर्ति कार्यो में रमण करते है, वे बार –बार संसार चक्र में जीव रूप के द्वारा उत्पन्न होते है। कर्म से चित्त की शुद्धि होती है, उपासना से भक्तिभाव उत्पन्न होते है, उससे ही ब्रह्म उपलब्धि प्राप्त होती है। यहाँ गुरू उपदेश ही मुख्य प्रयोजन बताते है। देव श्रेष्ठ इन्द्र भी ब्रह्मज्ञान लाभ के लिए सौ वर्ष तक गुरु के घर में जीवन बिताया है।

छठे अध्याय में आरुणि–श्वेतकेतु के उपाख्यान से आत्म तत्त्व का विवरण प्राप्त होता है। वहाँ उद्दालक से कहा 'स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो' इति। आरुणि ने श्वेतकेतु को उपदेश दिया है

की सच्चिदानन्द आत्मा ही ब्रह्म स्वरूप है। उससे ही सम्पूर्ण जगत चारों और से व्याप्त है। वह ही परम सत्यरूप है। सातवें अध्याय में नामब्रह्म, वाग्ब्रह्म आदि के रूप की आलोचना है। आठवें अध्याय में वर्णित ब्रह्म प्राप्ति का उपदेश है। उपनिषद् के अन्तिम अंश में ब्रह्म उपासना का वर्णन है। वहाँ कहा गया है की जो मनुष्य ब्रह्मचर्य, गृहस्थ आदि धर्मो को अच्छी प्रकार से पालन करके इन्द्रियों को संयम में करके शास्त्रों के द्वारा अनुमोदित विषय को छोड़कर सभी विषयों में हिंसा त्याग देता है, वह ही ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है।

पाठगत प्रश्न 6.6

1. कौन प्रस्थानत्रय का उपजीव्य है?
2. प्रस्थानत्रय का नाम लिखिए?
3. गीता का दूसरा प्रस्थान होने में क्या प्रमाण है?
4. तीसरे प्रस्थान को किसने लिखा?
5. षद्लृ धातु का क्या अर्थ है?
6. उपनिषद्-शब्द की व्युत्पत्ति को लिखिए?
7. कितने प्रकार के उपनिषद् थे?
8. कौन से उपनिषद् अब प्राप्त होते है?
9. ईश केन कठ - इत्यादि श्लोक को पूरा लिखिए।
10. ऋग्वेद के उपनिषदों का नाम लिखिए।
11. यजुर्वेद के उपनिषदों का नाम लिखिए।
12. उपनिषद् लोकप्रिय कैसे है?
13. आत्मानं रथिनं विद्धि - इस श्लोक को पूर्ण कीजिए।
14. डयसन महोदय के अनुसार से उपनिषदों के कितने प्रकार के भेद है और वे कौनसे है?
15. प्राचीन गद्य उपनिषद् में कौन से उपनिषद् आते हैं?
16. उत्तरकालिक उपनिषद् में कौनसे उपनिषद् आते है?
17. ईशावास्य उपनिषद् प्राचीन पद्य उपनिषद् में स्थान युक्त नहीं है, उसका प्रमाण वाक्य लिखिए।
18. तिलक महोदय के अनुसार से उपनिषद् काल कब आरम्भ होता है?

पाठ का सार

इस पाठ में हमने आदि भाग में आरण्यकों के विषय में विस्तार से जाना है। नगर में निवास करके वेद के तत्त्व ज्ञान को जानना अत्यन्त कठिन था। इसलिए परमार्थिक स्वरूप के ज्ञान के लिए मुनि अरण्य में ही अपने आश्रम आदि का निर्माण करके शिष्यों के लिए तत्त्व ज्ञान का उपदेश दिया है। इसलिए उस कारण से ही आरण्यक ग्रन्थों की उत्पत्ति हुई। और कहते है अरण्य में अध्ययन के कारण ही इनको आरण्यक कहते है। ऐतरेय आरण्यक, शाङ्खायन आरण्यक, बृहद आरण्यक, तैत्तिरीय आरण्यकों के विषय में आपने सामान्य ज्ञान को प्राप्त किया है। और पाठ के अंतिम भाग में उपनिषदों के विषय में कहा है। भारतीय विचार शास्त्र का सर्वश्रेष्ठ उपजीव्य ग्रन्थ उपनिषद् ही है। हमारे द्वारा प्राचीन काल से उपनिषदों की पूजा की जाती है। उपनिषद् में रस, गुण, अलङ्कार आदि से गुम्फित शब्द राशि के द्वारा ब्रह्मतत्त्व का प्रतिपादन किया जाता है। केवल सन्यासी ही नहीं, अपितु संसार में स्थित सनातन लोग उस उपनिषदों का श्रद्धा से अध्ययन करके तत्त्वज्ञान को प्राप्त करना चाहते है। यहाँ मुख्य रूप से दो उपनिषद् केन उपनिषद्, छान्दोग्य उपनिषद् की संक्षेप से व्याख्या की है।

पाठांत प्रश्न

1. आरण्यक का सामान्य परिचय लिखिए।
2. शाङ्ख्यायन आरण्यक का सार लिखिए।
3. आरण्यक के भाग उनके नाम और प्रपाठक आदि का चित्र रुप से प्रकटीकरण कीजिए।
4. ऐतरेय आरण्यक के विषय में लिखिए।
5. उपनिषद् का सामान्य परिचय लिखिए।
6. छान्दोग्य उपनिषद् की व्याख्या कीजिए।
7. केन उपनिषद् की व्याख्या कीजिए।
8. तैत्तिरीय उपनिषद् की व्याख्या लिखिए।
9. उपनिषदों का सामान्य परिचय लिखिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

6.1

1. ब्राह्मणों का।

टिप्पणियाँ

2. अरण्य में अध्ययन के कारण ही इनको आरण्यक कहते है।

   'अरण्ये तदधीयीतेत्येवं वाक्यं प्रवक्ष्यते।।'

3. अरण्य का एकान्त शान्त वातावरण को।
4. आरण्यक का।
5. वेदों से, औषधी से।
6. 'वेद से आरण्यक जैसे औषधियों से अमृत।'
7. आरण्यक।
8. यज्ञ के गूढ रहस्य का।
9. ब्रह्मविद्या का।
10. आरण्यक का प्रतिपाद्य विषय प्राणविद्या, उपनिषद् का प्रतिपाद्य विषय निर्गुण ब्रह्म की प्राप्ति है यह ही उन दोनों के प्रतिपाद्य विषय में भेद है।

6.2

1. ऋग्वेद में।
2. ऐतरेय ब्राह्मण का।
3. महाव्रत का।
4. निष्कैवल्य शस्त्र, प्राणविद्या, पुरुष आदि का।
5. निष्कैवल्य शस्त्र का वर्णन है।
6. संहिता उपनिषद्।
7. पदक्रम पाठ आदि का वर्णन है।
8. यथाक्रम से ऐतरेय, आश्वलायन।
9. शौनक।
10. प्राचीन है।

6.3

1. शाङ्ख्यायन आरण्यक।
2. शाङ्ख्यायन आरण्यक के तीसरे अध्याय से छठे अध्याय तक।
3. संहितोपनिषद्।
4. वर्षा का सम्पादन करने वाला गवामयन नामक यज्ञ का जो अन्तिम दिन अथवा उसके समीप दिन में (पूर्वदिन) है।

5. शाङ्ख्यायन श्रौत सूत्र में।
6. ग्यारह सौ में।
7. बिल्व फल से मणि निर्माण की प्रक्रिया का, काल का तथा स्वरूप का।
8. तेरहवें, चौदहवें अध्याय में।
9. आचार्य का वंश वर्णन है।
10. गुणाख्य शाङ्ख्यायन है।
11. कौहल कौषीतकि है।

6.4

1. यजुर्वेद से।
2. यहाँ आत्म तत्त्व का विशेष विवेचन होने से।
3. मैत्रायणी उपनिषद्।

6.5

1. अरण यह अर्थ है।
2. यथाक्रम से भाव, शिक्षा, ब्रह्मविद्या।
3. नारायणीय।
4. सात, आठ, नौ प्रपाठक में।
5. दूसरे प्रपाठक में।
6. यज्ञ के संकेत नाम उपलब्ध है।
7. छः।
8. सूर्य।
9. संध्या में प्रयुक्त सूर्य अर्घ के जल की महिमा का वर्णन है।
10. अनुवाकों में।
11. तवलकार आरण्यक।
12. जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण।
13. चौथे अध्याय के दसवें अनुवाक में।
14. शौनक।
15. शौनक से।

6.6

1. वेद।
2. उपनिद, गीता, ब्रह्मसूत्र।
3. 'सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
   पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुद्धं गीतामृतं महत्।।'
4. बादरायण के द्वारा।
5. विशरण, अगति, अवसादन अर्थ।
6. उप पूर्वक, नि पूर्वक से षद् धातु से क्विप करने पर उपनिषद् शब्द की उत्पति होती है।
7. अठारह सौ से भी अधिक।
8. दस।
9. 'ईश-केन-कठ-प्रश्न-मुण्ड-माण्डूक्य-तित्तिरिः।
   ऐतरेयं च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं दश।।'
10. एतरेय-कौषीतकि।
11. तैत्तिरीय, महानारायण, कठ, श्वेताश्वतर, मैत्रायणी उपनिषद् ईशावास्य उपनिषद् बृहदारण्यक।
12. उपनिषद् अत्यधिक सरल शैली में तत्त्व को ग्रहण कराते है।
13. **'आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।**
    बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।
    इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।
    आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः।।'
14. चार प्राचीन गद्य उपनिषद्, प्राचीन पद्य उपनिषद्, उत्तरकालिक गद्य उपनिषद्, अथर्वण उपनिषद्।
15. कठ उपनिषद्, ईश उपनिषद्, श्वेताश्वतर उपनिषद् और महानारायण उपनिषद्।
16. प्रश्न उपनिषद्, मैत्रायणीय उपनिषद् और माण्डूक्य उपनिषद्।
17. कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत् शतं समाः'।
18. २५०० सौ वि. पूर्व।

।। छठा पाठ समाप्त।।